Himalayan J. Soc. Sci. & Humanities ISSN: 0975-9891
Vol. 13, (2018) 49-54

अश्विनी कुमार ों का चिकित्सकीय योगदान

नीलम सिंह

संस्कृत विभाग, बी0 एच0 यू0, एच0आई0जी0 25–ए0डी0ए0 कालोनी, रसूलाबाद रोड, प्रयागराज–211004

*Corresponding Author Email: drprsingh@rediffmail.com

Received: 19.10.2018; Revised: 07.11.2018; Accepted: 05.12.2018.
©Society for Himalayan Action Research and Development

Abstract: ऋग्वैदिक देवताओं में अश्विनदेव का महत्त्वपूर्ण स्थान है। प्रख्यात चिकित्सक होने के कारण अश्विनों का आयुर्वेद से घनिष्ठ सम्बन्ध है। आयुर्वेद के अध्ययन परम्परा क्रम में सर्वप्रथम दक्ष प्रजापति ने आयुर्वेदशास्त्र को ब्रह्मा से पढ़कर यथावत् ग्रहण किया। तदनन्तर प्रजापति से अश्विन और अश्विनों से इन्द्र ने ग्रहण कर भूलोक पर इसका प्रचार–प्रसार किये। चिकित्सा की दृष्टि से आदर्शभिषक् हैं तथा ये युग्म रूप से कायचिकित्सा एवं शल्यचिकित्सा का प्रतिनिधित्व करते हैं। प्रस्तुत शोध पत्र में अश्विनीकुमारों द्वारा निर्मित अनेक औषध योगों की विस्तृत तालिका सूची का उल्लेख किया गया है। इनके द्वारा निर्मित अत्यन्त प्रचलित औषध योगों च्यवनप्राश, फलघृत, सौभाग्यशुण्ठीपाक, पुनर्नवामण्डूर आदि का वितरण मिलता है। इस प्रकार अश्विनीकुमार उत्कृष्ट चिकित्सा कर्मों द्वारा न केवल इन्द्रादि देवताओं पूजित हैं अपितु आज भी वे हमारे बीच प्रासंगिक हैं।

Keywords: अश्विनी कुमार, चिकित्सासारतन्त्र

ऋग्वैदिक देवताओं में अश्विनदेव का महत्त्वपूर्ण स्थान है। प्रख्यात चिकित्सक होने के कारण अश्विनों का आयुर्वेद से घनिष्ठ सम्बन्ध है। आयुर्वेद के अध्ययन परम्परा क्रम में सर्वप्रथम दक्ष प्रजापति ने आयुर्वेदशास्त्र को ब्रह्मा से पढ़कर यथावत् ग्रहण किया। तदनन्तर प्रजापति से अश्विन और अश्विनों से इन्द्र ने ग्रहण कर भूलोक पर इसका प्रचार–प्रसार किया। चिकित्सा की दृष्टि से ये आदर्शभिषक् हैं तथा युग्म रूप से कायचिकित्सा एवं शल्यचिकित्सा का प्रतिनिधित्व करते हैं। आयुर्वेदिक ग्रन्थों में वर्णित चिकित्सा कर्मों में च्यवन का वार्धक्यनाश, पूषन की दन्त–चिकित्सा, भग की नेत्र–चिकित्सा, श्वेतकेतु आरूणेय का किलास हरण, इन्द्र की भुजस्तम्भ चिकित्सा, चन्द्रयक्ष्ममोचन आदि का उल्लेख मिलता है इनके द्वारा सम्पादित मधुविद्या और प्रवर्ग्यविद्या, यज्ञशिरः सन्धान के विशिष्ट शल्य कर्मों का विवरण मिलता है। अश्विनीकुमारों द्वारा रचित आयुर्वेदीय ग्रन्थों में चिकित्सासारतन्त्र, आश्विनसंहिता, धातुरत्नमाला, नाड़ीनिदान का नाम आता है।

अश्विनीकुमारों द्वारा निर्मित अनेक औषध योगों की विस्तृत तालिका सूची का उल्लेख किया गया है। इनके द्वारा निर्मित अत्यन्त प्रचलित औषध योगों च्यवनप्राश, फलघृत, सौभाग्यशुण्ठीपाक, पुनर्नवामण्डूर आदि का वितरण मिलता है। इस प्रकार अश्विनीकुमार उत्कृष्ट चिकित्सा कर्मों द्वारा न केवल इन्द्रादि देवताओं पूजित हैं अपितु आज भी वे हमारे बीच प्रासंगिक हैं।

देवभिषक् अश्विनी कुमार

ऋग्वेद में अश्विनीकुमारों को 'देवानां भिषजौ' अर्थात देवताओं के वैद्य के रूप में स्वीकार किया गया है।[1] संख्या के आधार पर ये इन्द्र, अग्नि और सोम के पश्चात् आते हैं। ऋग्वेद में इनके विभिन्न नामों का उल्लेख मिलता है किन्तु इनके प्रमुख विशेषण नासत्या और दस्रा है। ये देवयुगल हैं तथा सदा साथ–साथ रहते हैं। ऋग्वैदिक अश्विनदेव ही परवर्ती साहित्य में अश्विनीकुमार के नाम से प्रसिद्ध हुए।

आयुर्वेद की व्युत्पत्ति एवं उसका स्वरूप विद्धातु ज्ञानार्थक एवं विद्लृ लाभार्थक है जिस ज्ञान से आयु होती है तथा जानी जाती है अथवा आयु प्राप्त की जाती है जिसके ज्ञान से आयु का ह्रास नहीं होता वह आयुर्वेद कहलाता है।[2] सुश्रुत आयुर्वेद को इस प्रकार परिभाषित करता हे जिसके द्वारा आयु जानी जाती है वह आयुर्वेद है।[3] प्राचीनता की दृष्टि से कुछ लोग इसे ऋग्वेद का उपवेद मानते हैं किन्तु चिकित्सकीय विवरणों की बहुलता के कारण वैद्यों के सम्प्रदाय में आयुर्वेद का सम्बन्ध अथर्ववेद से माना जाता है। इसे महर्षि आत्रेय, अग्निवेश, चरक और सुश्रुत आदि आयुर्वेद के प्रणेता इसे स्वीकार करते हैं।[4] इसकी महत्ता को

स्वीकार करते हुए आयुर्वेद को पञ्चम वेद माना गया है।[5] आयुर्वेद के अध्ययन परम्परा क्रम में सर्वप्रथम दक्ष प्रजापति ने इस समग्र आयुर्वेदशास्त्र को ब्रह्मा से पढ़कर यथावत् ग्रहण किया। तदनन्तर प्रजापति से देवभिषक् अश्विनों ने तथा अश्विनीकुमारों से इन्द्र ने समग्र रूप में ग्रहण किया।[6] अधिकांश ग्रन्थ इसका समर्थन करते हैं कि प्रजापति से अश्विनीकुमारों ने आयुर्वेद सीखा।[7] सुश्रुत संहिता यह उल्लेख करता है कि अश्विनीकुमार पक्षी के पदो पंखों के समान हैं। ज्ञान (सिद्धांत) एवं कर्म (व्यवहार) भी आयुर्वेद के दो पक्ष कहे गये हैं। इनमें से एक भी त्रुटित हो तो गति नहीं हो सकती। अतएव भिषक को उभयज्ञ होने का उपदेश दिया गया है।[8] अश्विनीकुमार कायचिकित्सा और शल्यचिकित्सा सम्बन्धी दोनों प्रकार के कार्य करते हैं। आयुर्वेद के आठ अंगों में ये दोनों अंग ही प्रधान हैं। शेष अंग सामयिक हैं और इन्हीं दोनों पर आश्रित हैं। इन प्रधान दो अंगों के मिश्रित होने से 'अश्विनौ' एक उपाधि थी जो काय–चिकित्सा और शल्य चिकित्सा में दक्ष व्यक्तियों को प्रदान की जाती है।[9]

अश्विनीकुमारों के चिकित्सीय कार्य

ऋग्वेद में वर्णित चिकित्सा सम्बन्धी कार्यों में प्रमुख कार्यों का विवरण इस प्रकार है–

(1) अश्विनीकुमारों ने वृद्धावस्था से पीड़ित च्यवन ऋषि को युवा बनाया।[10]

(2) इन्होंने पुत्र की अभिलाषा रखने वाली नपुंसकपतिका वध्रिमती को हिरण्यहस्त नामक पुत्र प्रदान किया।[11]

(3) इन्होंने परावृज को दृष्टिसम्पन्न और पंगु भग्नजानु श्रोण को गमन समर्थ बनाया।[12]

(4) अश्विनीकुमारों ने खेलराजा की स्त्री विश्पला का पैर युद्ध में कट जाने पर उसे लौहमयी जंघा प्रदान कर उसे निरोगी बनाया।[13]

(5) इन्होंने क्रुद्ध पिता के द्वारा नेत्रहीन कर दिये जाने पर ऋजाश्व को नेत्र–ज्योति प्रदान किया।[14]

(6) अश्विनों ने दुर्दान्त दानवों द्वारा जल में निगूढ़ रेभ ऋषि के क्षतिग्रस्त अवयवों को औषधियों से ठीक किया।[15]

(7) इन्होंने नेत्रहीन कण्व ऋषि को आँखें प्रदान की।[16]

(8) अश्विनों ने बहरे नृषद्–पुत्र को कर्ण प्रदान किया।[17]

(9) कुष्ठरोगों से जर्जर हुई घोषा को निरोगी बनाया।[18]

(10) तीन भागों में विभक्त श्याव ऋषि को जीवित कर दिया।[19]

(11) वार्धक्यपीड़ित वन्दन को पुनर्युवा किया।[20]

(12) इनके महत्त्वपूर्ण कार्यों में 'अश्व का मस्तक' जोड़ना है। अथर्वा ऋषि के पुत्र दधीचिकृषि के स्कन्ध पर अश्व का मस्तक जोड़ दिया था[21] इसके उपरान्त अश्विनीकुमारों को 'प्रवर्गविद्या रहस्य' की प्राप्ति हुई।

इनके भैषज्य सम्बन्धी कार्यों से अभिभूत होकर घोषा अश्विनीकुमारों की कुशल चिकित्सक कहकर सम्बोधित करती है।[22]

आयुर्वेदिक ग्रन्थों में वर्णित अश्विनीकुमारों द्वारा दिये गये कार्यों का विवरण इस प्रकार है–

च्यवन का वार्धक्यनाश

सुश्रुत संहिता के चिकित्सा स्थान में यह उल्लेख है कि भृगुवंशी च्यवनऋषि कामवासना में आसक्त होकर शीघ्र ही वृद्ध हो गये थे। अश्विनीकुमारों ने उन्हें पुनः यौवन प्रदान किया।[23] 'नावनीतकम्' में यह उल्लेख मिलता है कि च्यवन अश्विनीकुमारों द्वारा निर्दिष्ट अमृत तैल के प्रयोग से जरामुक्त हो गया।[24] शतपथ, ताण्डय ब्राह्मण, शान्तिपर्व, रत्नसमुच्चय इत्यादि ग्रन्थों में इसका वर्णन प्राप्त होता है।[25]

पूषन् की दन्तचिकित्सा

ब्राह्मण ग्रन्थों में अदन्तकः पूषा का उल्लेख मिलता है। चरक–संहिता के अनुसार पूषन् के प्रशीर्ण दाँतों की चिकित्सा अश्विनीकुमारों ने की थी।[26]

भग की नेत्र चिकित्सा

ब्राह्मण ग्रन्थों में अन्धोभगः मिलता है। चरक संहिता में यह उल्लेख मिलता है कि अश्विनीकुमारों ने ही उसकी चिकित्सा की।[27]

श्वेतकेतु आरूणेय का किलास हरण

अरूण कुलोत्पन्न किलासग्रस्थ श्वेतकेतु की चिकित्सा अश्विनीकुमारों ने की।[28]

भुजस्तम्भ–चिकित्सा

चरक–संहिता में यह उल्लेख मिलता है कि अश्विनीकुमारों ने स्तब्ध–भुजा को रोगमुक्त किया।[29]

चन्द्रयक्ष्म मोचन

शुक्र धातु की क्षीणता से ग्रस्त चन्द्रमा का वीर्य नष्ट हो जाने पर वह राजयक्ष्मा रोग से आक्रान्त हो गया। तब अश्विनीकुमारों ने उसी चिकित्सा की।[30]

नेत्राञ्जन निर्माण

इन्द्र का वृत्रासुर के साथ युद्ध हुआ। युद्ध गमन से पूर्व अश्विनीकुमारों ने इन्द्र के निमित्त एक विशेष मांगल्य नेत्राञ्जन बनाया।[31]

देवासुर संग्राम

देवासुर संग्राम में दैत्यों द्वारा आहत देवों को अश्विनों ने तत्क्षण घाव से रहित कर दिया।[32] प्रजापति दक्ष के यज्ञ में महादेव के गणों द्वारा जिन देवों के अंग–भंग हुए जो घायल हुए तथा जो ज्वरातिसार आदि रोगों से पीड़ित हुए न सबकी चिकित्सा अश्विनीकुमारों ने की।[33]

प्राचीन काल में शल्य चिकित्सक को अच्छी दृष्टि से नहीं देखा जाता था। तत्कालीन धार्मिक और सामाजिक स्तर पर चिकित्सा का व्यवसाय अच्छा नहीं माना जाता था। अश्विनीकुमारों के द्वारा की गई शल्यचिकित्सा के अतिविशिष्ट रूपों में मधुविद्या और प्रवर्ग्य विद्या का नाम लिया जाता है।[34] प्रवर्ग्य विद्या को अपिकक्ष्य विद्या भी कहा जाता है। मधुविद्या के तीन रूप हैं–

1. रसायन शास्त्र साइंस ऑफ रेजुवेशन
2. सन्धान शास्त्र प्लास्टिक एण्ड आर्थोपेडीक सर्जरी
3. मृतसंजीवनी शास्त्र साइंस ऑफ रिवाइविंग डेड

मधुविद्या की शिक्षा अश्विनीकुमारों को दधीचि से मिली अतः उन्हें मधु विद्या विशारद कहा जाता है। प्रवर्ग्य विद्या में किसी दूसरे जीव–जन्तु का अंग मनुष्य में जोड़ देने की शिक्षा है। प्रवर्ग्यविद्या सम्बन्धी एक उल्लेख प्राप्त होता है कि अश्विनों ने अथर्वन् के पुत्र दध्यङ् का सिर काटकर अलग रख दिया और उनके स्थान पर एक घोड़े का सिर लगा दिया तब दध्यङ् ने अश्विनों को वह विद्या सिखाई।[35] सुश्रुतसंहिता में यह उल्लेख मिलता है कि यक्ष का सिर काट लिया गया। तब देवता अश्विनों के पास गये और कहा कि आप हम सब देवों में श्रेष्ठ हैं। अतः यक्ष का सिर जोड़ दें। अश्विनीकुमारों ने देवताओं से कहा 'ऐसा ही होगा' किन्तु यक्ष में हमें भी भाग मिलना चाहिए। यह सुनकर देवता इन्द्र के समीप गये और अश्विनों को यक्ष में भाग देने के लिए इन्द्र को प्रसन्न कर लिया तब अश्विनीकुमारों ने यक्ष का सिर जोड़ दिया। यक्षशिरः सन्धान की इस घटना का उल्लेख तैत्तिरीय, चरक, शतपथ, ऐतरेय ब्राह्मण, महाभारत, पुराणादि में मिलता है।[36] इस प्रकार अश्विनीकुमार हमें कायचिकित्सक और शल्यचिकित्सक दोनों रूपों में प्राप्त होते हैं। इनके द्वारा लिखित निम्न ग्रन्थों का उल्लेख मिलता है। चिकित्सा–सारतन्त्र, आश्विन संहिता, धातुरत्नमाला नाड़ी–निदान।

अश्विनीकुमारों द्वारा रचित औषधियाँ

आयुर्वेद के विभिन्न ग्रन्थों में अश्विनीकुमारों द्वारा रचित अनेक औषधियों का उल्लेख मिलता है। न केवल औषधियों का उल्लेख अपितु औषधि निर्माण प्रक्रिया का भी विवरण प्राप्त होता है। कई औषधयोग अनेक ग्रन्थों में समान रूप से प्राप्त होते हैं–

आयुर्वेद के विभिन्न ग्रन्थों में अश्विनों के नाम से अनेक औषध योग उपलब्ध होते हैं उनमें से कुछ योग तो ऐसे हैं, जो अनेक ग्रन्थों में समान रूप से उद्धत होते हैं, (तालिका 1)

तालिका 1: अश्विनकुमारों के औषधयोग तथा रोगाधिकारों का विवरण

क्र0स0	औषधयोग	रोगाधिकार
1.	अमृतादि गुग्गुलु	वातरक्त चिकित्सा
2.	अमृता घृत	वातरक्त आदि
3.	कूष्माण्डखण्ड	रक्तपित्त
4.	कुमारी पाक	क्षय
5.	कुंकुमाद्य तैल	क्षुद्ररोग
6.	गुडपिप्पलीमोदक	प्लीहा वृद्धि
7.	गोक्षुराघ घृत	वाजीकरण
8.	गुडकूष्माण्डकावलेह	वाजीकरण
9.	चन्दनादि चूर्ण	रक्तपित्त, स्त्री–रोग
10.	च्यवनप्राश	रसायन
11.	तृषाहारी रस	अतितृषा
12.	दशमूल तैल	शिरोरोग
13.	दशांक तैल	वातरोग
14.	नारिकेलामृत	शूल, अम्लपित्त
15.	पिप्लीमूलाद्यरिष्ट	राजयक्ष्मा
16.	पुनर्नवामण्डूर	पाण्डु राजयक्ष्मा आदि
17.	फलघृत	पुंषत्व नाश, स्त्रीरोग
18.	भक्तोत्तर चूर्ण	वृद्धिरोग
19.	महिषाख्यागुग्गुलु	वतरक्त
20.	दाडिमाद्यघृत	प्रमेह
21.	महाकूष्माण्ड खण्डपाक वृष्य है	रक्तपित्त आदि रोग
22.	राजरसायन	प्रतिश्याय
23.	रसायनारिष्ट	रसायन
24.	रसादिचूर्ण	अतितृषा
25.	लक्ष्मणालोह	वन्ध्यत्व आदि स्त्रीरोग
26.	लवंगाद्यचूर्ण	ग्रहणी रोग
27.	लवंगाद्यमोदक	अग्निमांद्य
28.	बृहद्दाडिमाद्यघृत	प्रमेह
29.	शतावरीघृत	वाजीकरण
30.	समशर्करगुगुलु	वतरक्त
31.	सिन्दूराद्य तैल	कुष्ठ
32.	सवैश्वर चूर्ण	शूल
33.	सौभाग्यशुण्ठीपाक	सूतिका रोग
34.	हरीतक्यवलेह	श्वास, कास, शोथ[37]

उपरोक्त सभी योग आज भी उन्हीं प्रक्रियाओं से निर्मित होते हैं, जिनसे अश्विनकुमारों ने उनका निर्माण किया था। उन्हीं रोगों पर आज उनका उपयोग होता है जिन पर अश्विनों ने प्राचीन काल में किया था।

अतिप्रचलित योग

अश्विनों द्वारा निर्मित अतिप्रचलित योग का विवरण इस प्रकार है–

(1) अग्निवेश तन्त्र में जो 'च्यवनप्राश' का योग उद्धत किया गया है वह अश्विनों द्वारा रचित है। इसके सेवन से वृद्ध च्यवन

युवा हो गया। इसका प्रयोग वर्तमान में इस प्रकार हो रहा है कि उनके इतने प्राचीन होने पर भी धूमिल होने की कल्पना ही नहीं की जा सकती।

(2) 'फलघृत' योग अश्विनों के नाम से ही प्रसिद्ध है। गर्भ न ठहरने, गर्भपात होने, रजोदोषादि की स्थिति में फलघृत लेने का परामर्श दिया जाता है।

यदि किसी पुरूष की पुंसत्व शक्ति का ह्रास हाने से सन्तान न होती हो तो उसे भी फलघृत लेने की सलाह दी जाती है।[38]

(3) 'सौभाग्य–शुण्ठी–पाक' नामक योग की रचना भी अश्विनों ने की है। सहस्रों वर्ष बीत जाने पर आज भी प्रसूता के रोगों का निवारण करने के निमित्त और उसके स्वास्थ्य संवर्धन हेतु सुहाग सोंठ का पाक बनाया जाता है।[39]

(4) पुनर्नवा–मण्डूर नाम के योग के निर्माता भी अश्विनीकुमार हैं।[40] यह योग भी अतिप्रचलित है। पाण्डु, रक्ताल्पता, सन्निपातज पाण्डु (ल्यूकेमियां) तथा कामला एवं शोथ आदि रोगों में चिकित्सक इसका प्रयोग करते हैं।

इसके अतिरिक्त शतावरी घृत, लवंगाद्य चूर्ण एवं लक्ष्मणा–लोह तथा कूष्माण्ड खण्ड[41] अत्यधिक प्रचलित हैं।

निःसन्देह आयुर्वेद के इतिहास में अश्विनीकुमारों के योगदान को विस्मृत नहीं किया जा सकता है। यह कहना कदापि अतिशयोक्ति नहीं होगी कि हमारे ऋषियों–मुनियों में वैज्ञानिक अन्वेषण की क्षमता विद्यमान थी। जिन औषधियों की उन्होंने खोज की, जिन रोगों पर उनका प्रयोग किया उन्हीं प्रक्रियाओं से आज भी औषधियाँ निर्मित की जा रही हैं। हजारों वर्षों बाद भी वे प्रासंगिक हैं। अश्विनों के चिकित्सकीय कार्यों के कारण स्वर्ग के देवता इन्द्र भी इनकी पूजा करते हैं।[42] इस प्रकार हम कह सकते हैं कि जिन औषध–योगों की रचना अश्विनीकुमारों ने की वह आज भी लोगों द्वारा व्यवहृत की जा रही है।

सन्दर्भ सूची

1. ऋग्वेद 1.157.6, 8.18.18
2. काश्यप संहिता, विमान स्थान पृ0 61
3. सुश्रुत संहिता सूत्रस्थान 1.15
   आयुरस्मिन् विद्यते, अनेन वाऽयुर्विन्दति इत्यायुर्वेदः।
4. चरक संहिता, सूत्र स्थान 30/21
5. काश्यपसंहिता, विमानस्थान पृ0 62
6. चरक संहिता, सूत्र स्थान 1. 4–5
7. ऋग्वेद 8.86.1
8. आचार्य प्रियव्रत शर्मा, ''आयुर्वेद का वैज्ञानिक इतिहास'', चौखम्बा ओरयण्टालिया, वाराणसी (सुश्रुत संहिता, सूत्र स्थान 3.47)
9. अत्रिदेव विद्यालंकार, (प्रथम संस्करण, 1960, द्वितीय संस्करण, 1991) ''आयुर्वेद का वृहत् इतिहास'' उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान, लखनऊ।
10. ऋ. वे. 1.117.13
    युवं च्यवानमश्विना जरन्तं पुनर्युवान चक्रथुः शचीभिः।
11. ऋ.वे. 1.117.24
    हिरण्यहस्तमश्विना रराणा पुत्रं नरा वध्रिमत्या अदत्तम्।
12. ऋ. वे. 1.112.8
13. ऋ. वे. 1.116.15
14. ऋ. वे. 1.116.15
15. ऋ. वे. 1.117.4
16. ऋ. वे. 1.117.8
17. ऋ. वे. 1.117.8
18. ऋ. वे. 1.117.8
19. ऋ. वे. 1.117.24

20. ऋ. वे. 1.119.7
21. ऋ. वे. 1.117.22
आथर्वणायाश्विना दधीचेऽश्व्यं शिरः प्रत्यैरयतम् स वां मधु प्रवोच दृतायन त्वाष्ट्र यद् दस्रा वपिकक्ष्यंवाम्।।
22. ऋ. वे. 10.39.5
23. चरक संहिता, चिकित्सा स्थान, 1. (4) 44.
24. कविराज सूरमचन्द्र, ''आयुर्वेद का इतिहास'' पृ0–125 पर उद्धत (मूलग्रन्थ नावनीतकम्), चौखम्बा, अमर भारती प्रकाशन, वाराणसी, द्वितीय संस्करण, 1978.
25. शतपथ ब्राह्मण 4.15.11–12: भैषज्यरत्नावली 1.17, भावप्रकाश पूर्वखण्ड 1.13.
26. चरक चिकित्सा स्थान, 1 (4) 42, भैषज्य रत्नावली 1.16, भावप्रकाश पूर्वखण्ड 1.12.
27. चरक संहिता, चिकित्सा स्थान 1.4.42
भैषज्य रत्नावली 1.16
28. कविराज सूरमचन्द्र, ''आयुर्वेद का इतिहास'' पृ0 30 पर उद्धृत, चौखम्बा अमर भारती प्रकाश, वाराणसी, द्वितीय संस्करण, 1978.
29. चरक, चिकित्सा स्थान 1. (4) 42, भावप्रकाश पूर्वखण्ड 1.11. भैषज्यरत्नावली 1.15.
30. चरक, चिकित्सास्थान 1. (4). 43 भावप्रकाश पूर्वखण्ड 1.12., भैषज्य रत्नावली 1.16.
31. सूरमचन्द्र ''आयुर्वेद का इतिहास'' पृ0 31 पर उद्धृत मूल ग्रन्थ (अष्टांगहृदयम्)।
32. भाव प्रकाशन पूर्वख्ण्ड 1.10 भैषज्यरत्नावली 1.14.
33. रघुवीर शरण शर्मा वैद्य ''आयुर्वेद के प्रवर्त्तक देवता'' पृ0 67 पर उद्धृत.
34. बृहदारण्यक उप 2.5.17, जैमिनीय ब्रा0 3.64 126–127, ऋ.वे. 1.117.22
35. ऋ. वे. 1.117.22
36. सुश्रुत, सूत्रस्थान 1.17.
37. श्री वैद्य पं0 ब्रह्मानन्द त्रिपाठी (अक्टू0 1991) ''आयुर्वेद विकास'' देवभिषक् अश्विनीकुमार पृ0 12.
38. योगरत्नाकर उत्तरार्द्ध (योनिव्यापद् चिकित्सा), 57
39. योगरत्नाकर (सूतिकारोगाधिकार) उत्तरार्ध, 14.
40. श्री वैद्य पं0 ब्रह्मानन्द त्रिपाठी (अक्टू0 1991), देवभिषक् अश्विनीकुमार पृ0 15, भावप्रकाश वृद्धन्निघण्टु, रतनाकर, रसराज सुन्दरः।
41. रघुवीर शरण शर्मा वैद्य ''आयुर्वेद के प्रवर्त्तक देवता'' (पृ0 65) – अश्विभ्याँ विहितं हृद्यं कूष्माण्डकरसायनम्।
42. चरक, चिकितसास्थान, 1 (4) .40.
'अश्विनाविव देवेन्द्रः पूजयेदतिशक्तितः'

*****